वर्ष-2, अंक-3, जून-90, 13-19

अर्हत्वचन
कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ, इन्दौर

जैनदर्शन एवं आधुनिक विज्ञान*

(व्यवहार पल्य का गणित एवं आधुनिक अणु विज्ञान)

□ पारसमल अग्रवाल**

I. प्रस्तावना

जैन दर्शन का एक मूल सिद्धान्त यह भी है कि परमात्मा न तो सृष्टि का निर्माण करता है और न ही सृष्टि को चलाता है। सृष्टि के समस्त पदार्थ प्राकृतिक नियमों के अनुसार परिवर्तनशील होते हैं। आधुनिक विज्ञान की भी यही मूल धारणा है। इस मूलभूत समानता के अतिरिक्त चूंकि जैनाचार्यों ने शास्त्र लिखते समय आत्मज्ञान का ही मुख्यतः सहारा लिया था, अतः यदि आज के जटिल एवं खरबों रुपयों के वैज्ञानिक खर्च द्वारा प्राप्त वैज्ञानिक परिणाम जब जैनाचार्यों द्वारा वर्णित तथ्यों से मेल खाते हैं तो सहज ही हमारी बुद्धि उन आचार्यों के प्रति नतमस्तक हो जाती है। ऐसी स्थिति में उनके कथनों पर हमारी श्रद्धा अधिक दृढ़ होना स्वाभाविक है।

मेरे उक्त कथन को पुष्ट करने वाले कई उदाहरण अब तक विभिन्न पुस्तकों एवं शोध पत्रों में वर्णित हो चुके हैं व होते रहेंगे। ऐसे उदाहरणों की श्रृंखला न केवल हमारे आचार्यों की विद्वता एवं महानता को प्रकाशित करती है अपितु कुछ ऐसी दिशाएँ भी दे सकती हैं जिनमें आधुनिक विज्ञान भी लाभान्वित हो सकता है। इसी क्रम में मैं यहाँ कुछ तथ्यात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करना चाह रहा हूँ।

इस लेख के द्वितीय खण्ड में जैनागम में बहुचर्चित व्यवहार पल्य की रोचक परिभाषा व गणित से जुड़े सूक्ष्म रसायन शास्त्र पर प्रकाश डाला गया है एवं अंतिम खण्ड में रसायन शास्त्र से भी सूक्ष्मतर विज्ञान पर जैनाचार्यों की पैनी दृष्टि एवं उनकी आधुनिक विज्ञान में संभावित उपयोगिता के संकेत दिए जा रहे हैं।

II.—व्यवहार पल्य परिभाषा में गर्भित विज्ञान

(a) व्यवहार पल्य की परिभाषा

जिनसेनाचार्य के हरिवंश पुराण के सातवें सर्ग में आचार्य लिखते हैं[1]—

"एक ऐसा गढ़ा खोदा जाय जो एक योजन चौड़ा, एक योजन लम्बा और एक योजन गहरा हो और इसमें मुख तक एक से सात दिन तक के मेण के बच्चे के ऐसे कट-कूट कर

---

* पं. जगन्मोहनलाल शास्त्री साधुवाद समारोह के अन्तर्गत जैन विद्या संगोष्ठी (सतना 10-12, अप्रैल-90) में पठित।

** रीडर, भौतिकी अध्ययन शाला, विक्रम वि. वि., उज्जैन।

बालों के टुकड़े भरे जायें जिनके फिर टुकड़े न हो सकें । ऐसे बालों के टुकड़ों से भरे हुए गढ़े का नाम व्यवहार पल्य है और इन टुकड़ों में से हर एक टुकड़े को सौ-सौ वर्ष के बाद निकाला जाए तो जितने काल में वह गढ़ा खाली हो जाय उतने काल का नाम व्यवहार पल्योपम काल है ।" (48–49)

जैन सिद्धान्त दर्पण[2] में इसका कथन निम्नानुसार किया गया है:—

'प्रमाणांगुल से निष्पन्न एक योजन प्रभाग गहरा और एक योजन प्रमाण व्यास वाला एक गोला गर्त्त[3] (गढ़ा) बनाना । उस गर्त्त को उत्तम भोग भूमि वाले मेंढेके बालों के अग्रभागों से भरना । गणित करने से उस गर्त्त के रोमों की सख्या[4] 413452630308203177749512192000000000000000000 हुई । इस गर्त्त के एक-एक रोम को सौ-सौ वर्ष पीछे निकालते-निकालते जितने काल में वे सब रोम समाप्त हो जायें, उतने काल को व्यवहार-पल्य का काल कहते हैं ।[5]

(b) प्रयुक्त सूत्र

अर्थ प्रकाशिका[6] में इस संख्या (रोम संख्या) की गणना जिस विधि से की है, उसे निम्नांकित सूत्र द्वारा व्यक्त किया जा सकता है:—

$$n = \frac{\pi r^2 d}{a^2 l} \qquad (1)$$

यहाँ,

n = गढ़े में रोमों की संख्या

r = आधा योजन = 1000 कोश

d = एक योजन = 2000 कोश

a = बाल के टुकड़े का व्यास

l = बाल के टुकड़े की लम्बाई = a

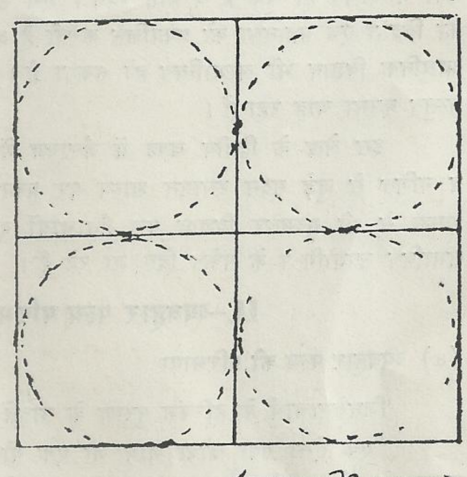

चित्र क्र. 1 : व्यास 'a' के कई वृत्त सटा कर रखे जाएँ तो यद्यपि वृत्ताकार क्षेत्रफल $\pi a^2/a$ होगा किन्तु प्रत्येक वृत्त a^2 क्षेत्रफल रोकेगा। औसतन $(a^2 - \pi a^2/4)$ क्षेत्रफल प्रति वृत्त रिक्त रहेगा।

समीकरण (1) के दायें पक्ष के हर का रहस्य चित्र क्र. 1 से स्पष्ट हो सकता है। चित्र में वृत्ताकार काट का क्षेत्रफल यद्यपि $\frac{\pi a^2}{4}$ है किन्तु क्षेत्रफल a^2 में दूसरा बाल का टुकड़ा प्रवेश नहीं कर पायेगा। अतः बाल के टुकड़े का आयतन यद्यपि $\frac{\pi a^2 l}{4}$ (यदि बेलनाकार है) या $\frac{4}{3}\pi a^3$ (यदि गोलाकार है) है किन्तु उसके द्वारा रोके जाने वाला आयतन $a^2 l$ (यदि बेलनाकार है) या a^3 (यदि गोलाकार है) होगा यानी $\left(a^2 l - \frac{\pi a^2 l}{4}\right)$ या ($a^3 - \frac{4}{3}\pi a^3$ आयतन) प्रत्येक बाल के आसपास रिक्त रहेगा।

(c) निहित रसायन शास्त्र

इस तथ्य में निहित रसायन विज्ञान के उद्‌घाटन हेतु हम परिभाषा एवं a के आंकिक मान का विश्लेषण कर सकते हैं। परिभाषा में कहा गया है ऐसे बालों के टुकड़े भरे जायें **'जिनके फिर टुकड़े न हो सके'**। इस तथ्य का मर्म समझने के पूर्व जैनागम के इससे सम्बन्धित कुछ अन्य तथ्यों का उल्लेख आवश्यक होगा। जैनागम में स्थान-स्थान पर यह उल्लेख आता है कि पुद्‌गल के सबसे छोटे टुकड़े को अविभागी पुद्‌गल परमाणु या परमाणु कहते हैं। सुविधा एवं भ्रम से बचने हेतु अविभागी पुद्‌गल परमाणु को मैं यहाँ 'अवि. परमाणु' द्वारा व्यक्त करना चाहूँगा ताकि विज्ञान की पुस्तकों में प्रचलित परमाणु (atom) एवं 'अवि. परमाणु' की भिन्नता बनी रहे। जैनागम में यह भी उल्लेख[7] है कि अनन्तानन्त 'अवि. परमाणुओं' के स्कन्ध को अवसन्नासन्न कहते हैं व आठ अवसन्नासन्न का एक सन्नासन्न, 8 सन्नासन्न का एक तृटरेणु, 8 तृटरेणु का एक त्रसरेणु, 8 त्रसरेणु का एक रथरेणु, 8 रथरेणु का एक उत्तम भोगभूमि वालों का बालाग्र होता है। स्पष्ट है कि 'अवि० परमाणु' तो बाल के टुकड़े से बहुत-बहुत सूक्ष्म है। इतना होते हुए भी आचार्यों ने उक्त परिभाषा में 'जिनके फिर टुकड़े न हो सके' ऐसा लिखा है। इसका क्या प्रयोजन हो सकता है?

रसायन शास्त्र का विद्यार्थी जिसने अणु एवं परमाणु की परिभाषा समझी है वह जानता है कि पानी के सबसे छोटे टुकड़े यानी पानी के एक अणु (H_2O) के यदि हम फिर टुकड़े करेंगे तो फिर वह पानी नहीं रहेगा (हाइड्रोजन एवं ऑक्सीजन हो जायेगा)। इसी प्रकार इस परिभाषा में भी यह मर्म है कि यद्यपि बाल का सूक्ष्मातिसूक्ष्म टुकड़ा भी एक स्कन्ध ('अवि. परमाणुओं' का समूह) है व उसके टुकड़े तो हो सकते हैं किन्तु एक टुकड़ा ऐसा भी होता है कि उसके पुनः टुकड़े करने पर बाल के रासायनिक गुण समाप्त हो जाते हैं यानी बाल जिन रासायनिक पदार्थों से मिल कर बना है वे पदार्थ उस टुकड़े में उसी अनुपात में कायम रहे तब तक ही वह टुकड़ा बाल कहला सकता है। इस प्रकार 'फिर टुकड़े न हो सकें' इस तथ्य को पुद्‌गल के 'अवि. परमाणु' एवं स्कन्ध की संकल्पना के साथ मिलाकर देखने से बाल की आणविक प्रकृति स्पष्ट होती है। इस तथ्य की विशेष पुष्टि के लिये हम बाल के इस सूक्ष्मतम टुकड़े की मोटाई या व्यास 'a' के मान पर विचार कर सकते हैं।

लोकाकाश के एक प्रदेश के आकार या 'अवि. परमाणु' के आकार तक तो पहुँचना अभी बहुत दूर प्रतीत होता है।

कृतज्ञता ज्ञापन

मैं मेरे पिताश्री पं. भँवरलालजी के प्रति इस लेख में मदद के लिए कृतज्ञता ज्ञापित करना चाहूँगा जिन्होंने पं. द्यानतरायजी कृत देवपूजा की जयमाला में वर्णित 'पैंतालीस पल्य के अच्छर' की तरफ संकेत कर मुझे इस दिशा में शोध करने को प्रेरित किया।

ऐलक पन्नालाल दि. जैन सरस्वती भवन, फ्रीगंज, उज्जैन एवं इसके व्यवस्थापक पं. दयाचंदजी, शास्त्री से प्राप्त शास्त्रों की मदद के लिए भी हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ। कौनसी जानकारी किस ग्रन्थ में मिल सकेगी इस मामले में पं. दयाचंदजी का विषद ज्ञान इस शोध पत्र के बनाने में बहुत सहायक सिद्ध हुआ है।

परिशिष्ट–1

(a) जैन सिद्धान्त दर्पण में निम्नांकित सूत्र वर्णित[6] हुए हैं :—

8 उत्तम भोग भूमि वालों का बालाग्र = 1 मध्यम भोग भूमि वालों का बालाग्र,
8 मध्यम भोग भूमि वालों का बालाग्र = 1 जघन्य भोग भूमि वालों का बालाग्र,
8 जघन्य भोग भूमि वालों का बालाग्र = 1 कर्मभूमि वालों का बालाग्र,
8 कर्मभूमि वालों का बालाग्र = 1 कर्मभूमि वालों के बालाग्र की एक लीख
8 लीख = 1 सरसों,
8 सरसों = 1 जौ,
8 जौ = 1 अंगुल (यह अंगुल उत्सेधांगुल है। प्रमाणांगुल इसमें 500 गुना होता है।),
6 अंगुल = 1 पाद,
2 पाद = 1 वितस्त,
2 वितस्त = 1 हाथ,
4 हाथ = 1 धनुष,
2000 धनुष = 1 कोश,
4 कोश = 1 योजन,

(प्रमाणांगुल से निष्पन्न योजन उत्सेधांगुल से निष्पन्न योजन से 500 गुना होता है अर्थात् 2000 कोश के बराबर होता है।

इन सूत्रों से निम्नांकित परिणाम प्राप्त हो सकते हैं—

$$1 \text{ कोश} = 2000 \times 4 \times 2 \times 2 \times 6 \times 8 \times 8 \times 8 \times 8 \times 8 \times 8 \times 8\, a$$
$$= 1000 \times 192 \times 8^7 a$$

या $2 \text{ मील} = 1000 \times 192 \times 8^7 a$

या $2 \times 1760 \times 3 \times 30.48 \text{ सेण्टीमीटर} = 1000 \times 192 \times 8^7 a$

या $= \dfrac{2 \times 1760 \times 3 \times 30.48 \times 10^8}{1000 \times 192 \times 8^7}$ एंगस्ट्राम

$= 79.936$ एंगस्ट्राम

(b) लेख में वर्णित समीकरण (1) से गणना :

$l = a$ रखने पर

$$a^3 = \frac{\pi r^2 d}{n}$$

यहाँ $r = 0.5$ योजन

$d = 1.0$ योजन

$n = 4.134526 \ldots\ldots \times 10^{44}$

1 योजन $= 2000 \times 2 \times 1760 \times 3 \times 30.48 \quad 10^8$ एंगस्ट्राम

$= 64373.76 \times 10^{12}$ एंगस्ट्राम

$$\therefore\ a^3 = \frac{3.14 \times 0.5 \times 0.5 \times 1.0 \times 64373.76^3 \times 10^{36}}{4.134526 \ldots\ldots \times 10^{44}} A^{\circ 3}$$

$$= \frac{3.14 \times 0.5 \times 0.5 \times 1.0 \times 2.6676363 \times 10^{14} \times 10^{36}}{4.134526 \ldots\ldots \times 10^{44}} A^{\circ 3}$$

$$= 0.5064896 \ldots\ldots \times 10^6\ A^{\circ 3}$$

$$\therefore\ a = (0.5064896 \ldots\ldots \times 10^6)^{1/3} = 79.712\ A^\circ$$

दोनों विधियों से प्राप्त परिणामों में समानता कोई आश्चर्य नहीं है क्योंकि विधि (a) के सूत्रों का उपयोग करके ही अर्थ प्रकाशिका में n की गणना करके n का मान 4.134526 .... $\times 10^{44}$ प्राप्त किया था। दोनों विधियों में प्राप्त परिणामों में अन्तर 0.28 प्रतिशत है। इस अन्तर का कारण π के मान में भिन्नता प्रतीत होती है।

सन्दर्भ

1. जिनसेनाचार्य : भाषा हरिवंश पुराण,
   प्रकाशक : गाँधी हरिभाई देवकरण जैन ग्रन्थमाला, बम्बई, 1918
2. पं. गोपालदासजी बरैया, 'जैन सिद्धान्त दर्पण'
   प्रकाशक : मुनिश्री अनन्तकीर्ति दि. जैन ग्रन्थमाला समिति, बम्बई, 1928
3. विभिन्न ग्रन्थों में वर्णित परिभाषा एवं गणना के आधार पर यह ज्ञात होता है कि यह गढ़ा बेलनाकार (Cylinadrical) होना चाहिये। यानी 'गोल' का अर्थ वृत्ताकार परिच्छेद लेना चाहिये
4. यह संख्या 45 अंक प्रमाण है। अर्थ प्रकाशिका में भी यह संख्या इतनी ही लिखी हुई है।
5. सन्दर्भ 2, पृ. 128–129

6. पं. सदासुखजी कासलीवाल (जयपुर) एवं पं. परमेष्ठी सहायजी अग्रवाल (आरा) द्वारा रचित 'अर्थप्रकाशिका' प्रकाशक : गाँधी हरिभाई देवकरण जैन ग्रन्थमाला, 1916, पृ. 163-165

7. सन्दर्भ : 2, पृ. 128

8. एक एंगस्ट्राम=एक सेण्टीमीटर का दस करोड़वाँ भाग

9. हमारी पृथ्वी कर्मभूमि है।

10. पारसमल अग्रवाल, 'क्वाण्टम सिद्धान्त', (राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी जयपुर, 1983)

(b) Paras Mal Agrawal, Quantum Mechanies', in 'Horizons of Physics', Edited by A.W. Joshi, (Wiley Eastern, Ltd. New Delhi, 1989), Chapter 2

(a) David Bohm, 'Quantum Theory', (Asia Publishing House, Bombay, 1960).

(b) P.C.W. Davies, and J.R. Brown (Editors), 'The Ghost in the Atom', A discussion of the mysteries of quantum physics (Cambridge University Press, 1986).

12. 1 फर्मी$=10^{-13}$ सेण्टीमीटर=एक सेण्टीमीटर का 100 खरबवां भाग।